दयाबोध और विनय मालिका

जिस के आदि में

उन महात्मा का जीवन-चरित्र है और
फिर उनकी अति कोमल और मधुर
साखियाँ मुख्य मुख्य अंगों में
यथाक्रम रक्खी गई हैं

और

गूढ़ शब्दों के अर्थ व संकेत और भक्तों
की कथा नोट में लिख दी गई है।

मुद्रक तथा प्रकाशक

बेलविडियर प्रेस, प्रयाग।

मूल्य ।≈)

Printed and Published
at The Belvedere Printing Works, Allahabad. By B. Sajjan.

आवश्यक सूचना

संतबानी पुस्तकमाला के उन महात्माओं की लिस्ट जिनकी जीवनी तथा बानियाँ छप चुकी हैं—

कबीर साहिब का अनुराग सागर
कबीर साहिब का बीजक
कबीर साहिब का साखी-संग्रह
कबीर साहिब की शब्दावली—चार भागों में
कबीर साहिब की ज्ञान-गुदड़ी, रेखते, झूलने
कबीर साहिब की अखरावती
धनी धरमदास की शब्दावली
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) भाग १ 'शब्द'
तुलसी शब्दावली और पद्मसागर भाग २
तुलसी साहिब का रत्नसागर
तुलसी साहिब का घट रामायण—२ भागों में
दादू दयाल भाग १ 'साखी',—भाग २ "पद"
सुन्दरदास का सुन्दर बिलास
पलटू साहिब भाग १ कुंडलियाँ। भाग २
रेख़ते, झूलने, सवैया, अरिल, कवित्त।
भाग ३ भजन और साखियाँ।
जगजीवन साहब—२ भागों में
दूलनदास जी की बानी
चरनदास जी की बानी, दो भागों में
गरीबदास जी की बानी
रैदास जी की बानी
दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर
दरिया साहिब के चुने हुए पद और साखी
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी
भीखा साहिब की शब्दावली
गुलाल साहिब की बानी
बाबा मलूकदास जी की बानी
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी
यारी साहिब की रत्नावली
बुल्ला साहिब का शब्दसार
केशवदास जी की अमीघूँट
धरनीदास जी की बानी
मीराबाई की शब्दावली
सहजोबाई का सहज-प्रकाश
दयाबाई की बानी
संतबानी संग्रह, भाग १ 'साखी',—भाग २ 'शब्द'
अहिल्या बाई (अंग्रेज़ी पद में)

अन्य महात्मा जिनकी जीवनी तथा बानियाँ नहीं मिल सकीं

१ पीपा जी। २ नामदेव जी। ३ सदना जी। ४ सूरदास जी। ५ स्वामी हरिदास जी। ६ नरसी मेहता। ७ नाभा जी। ८ काष्ठजिह्वा स्वामी।

प्रेमी और रसिक जनों से प्रार्थना है कि यदि ऊपर लिखे महात्माओं की असली जीवनी तथा उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तकमाला के किसी ग्रन्थ में नहीं छपे हैं मिल सकें तो कृपा पूर्वक नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें। इस कष्ट के लिए उनको हार्दिक धन्यवाद दिया जायगा। यदि पाठक महोदय ऊपर लिखे महात्माओं का असली चित्र भी प्राप्त कर सकें, तो उनसे प्रार्थना है कि नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें। चित्र प्राप्ति के लिए उचित मूल्य या ख़र्च दिया जायगा।

मैनेजर—संतबानी पुस्तकमाला, बेलविडियर प्रेस, प्रयाग।

॥ दयाबाई का जीवन-चरित्र ॥

—:o:—

दयाबाई जी महात्मा चरनदास जी की शिष्य और सहजोबाई की गुरु-बहिन थीं। उन दोनों की बानियाँ हम पहले छाप चुके हैं। यह भी मेवात के डेहरा नामी गाँव में पैदा हुईं जहाँ कि इनके गुरु महराज ने अवतार धरा था और फिर गुरु जी के साथ दिल्ली जाकर उनकी सेवा कमाती रहीं और वहीं चोला छोड़ा।

दयाबाई भी चरनदास जी और सहजोबाई की सजाती अर्थात ढूसर जाति की थीं और कहते हैं कि अपने गुरु के कुलही में जन्म लिया था। विक्रमी संवत् १७५० और १७७५ के दर्मियान इनका प्रकट होना पाया जाता है और संवत् १८१८ में इन्हों ने अपना पहिला दयाबोध रचा।

दूसरा, ग्रन्थ विनय मालिका भी जिसमे दयादास की छाप है इन्हीं का बनाया हुआ कहा जाता है और इस मे संदेह करने की कोई बात नहीं पाई जाती क्योंकि 'एक तो दोनों ग्रन्थों की भाषा और ढंग एक से है' दूसरे दोनों मे महात्मा चरनदास जी अपने गुरु की महिमा गाई है तीसरे दयाबोध में जो निश्चय करके पूरा पूरा दयाबाई का रचा हुआ है एक जगह दयादास नाम करके छाप दी हुई है [सुमिरन के अंग की साखी नम्बर ३ देखो] और चौथे चरनदासियों का भी खयाल है कि दयादास जी की कोई प्रथक व्यक्ति न थी और यह नाम दया-बाई ही का है।।जो हो परन्तु इस में संदेह नहीं कि विनय मालिका किसी गहिरे भक्त की लिखी हुई है जो प्रेमीजनों के पढ़ने योग्य है इसलिये हम उसे भी साथही छापते हैं।

हमने दयाबाई की बानी कोमलता, मधुरता और प्रेम रस में पगे होने की प्रशंसा कई बरस हुए एक प्रेमी मित्र से सुनी थी और तभी से उसके खोज में थे पर कहीं नहीं मिली। अब मुन्शी सहदेव सहाय जी रईस व माफीदार मौजा तेरही जिला बाँदा की सहायता से जो कि महात्मा चरनदास जी के घर के पक्के अनुयायी हैं हमको यह दुर्लभ बानी हाथ लगी है जिसके लिये हम मुन्शी जी को अनेक धन्यवाद देते हैं।

इस बानी के नोट अर्थात टीका में उन महात्माओं की कथा संक्षेप में लिख दी गई है जिनकी लीला का बानी में इशारा है जिसमें वह साखियाँ भली भाँति समझ में आजायँ। गूढ़ कड़ियों और शब्दों का अर्थ दे दिया गया है। इन कथाओं में से कितनी ऐसी हैं जो भक्तमाल में नहीं लिखी हैं और जो बहुत खोज से हाथ आईं।

॥ सूचीपत्र ॥

—सूचना—

दयाबाई की असली तसवीर की आवश्यकता है। पाठकों से निवेदन है यदि प्राप्त हो सके तो निम्नलिखित पते से पत्र व्यवहार करें—

मैनेजर—बेलविडियर प्रेस, प्रयाग

दयाबाई की बानी

दया बोध

॥ गुरु महिमा का अंग ॥

॥ दोहा ॥

वंदौं श्री सुकदेवजी सब बिधि करो सहाय ।
हरो सकल जग आपदा प्रेम-सुधा रस प्याय ॥१॥
जै जै परमानंद प्रभु परम पुरुष अभिराम ।
अंतरजामी कृपानिधि "दया" करत परनाम ॥२॥
ब्रह्म रूप सागर सुधा गहिरो अति गम्भीर ।
आनँद लहर सदा उठै नहीं धरत मन धीर ॥३॥
जहाँ जाय मन मिटत है ऐसो तत्त सरूप ।
अचरज देखि "दया" करै बंदन भाव अनूप ॥४॥
चरनदास गुरुदेवजू ब्रह्म-रूप सुख-धाम ।
ताप-हरन सब सुख-करन "दया" करत परनाम ॥५॥
अंध कूप जग में पड़ी "दया" करम बस आय ।
बूड़त लई निकासि करि गुरु गुन* ज्ञान गहाय ॥६॥
छके रहैं आनन्द में आठ पहर गलतान ।
अद्भुत छवि जिनकी बनी "दया" धरत मन ध्यान ।
चरनदास गुरुदेव हैं दया-रूप भगवान ।
इन्द्रादिक जो देवता देत तिन्हैं सनमान ॥ ७ ॥

---

* डोरी ।

सतगुर सम कोउ है नहीँ या जग मेँ दातार ।
देत दान उपदेस सोँ करैँ जीव भव पार ॥ ९ ॥
गुरु किरपा बिन होत नहिँ भक्ति भाव बिस्तार ।
जोग जज्ञजप तप "दया" केवल ब्रह्म बिचार ॥ १० ॥
या जग मेँ कोउ है नहीँ गुरु सम दीन-दयाल ।
सरनागत कूँ जानि कै भले करैँ प्रतिपाल ॥ ११ ॥
मनसा बाचा करि "दया" गुरु चरनौँ चित लाव ।
जग समुद्र के तरन कूँ नाहिन आन उपाव ॥ १२ ॥
जे गुरु कूँ बंदन करैँ "दया" प्रीति के भाय ।
आनँद मगन सदा रहैँ तिरबिधि ताप नसाय ॥ १३ ।
चरन कमल गुरदेव के जे सेवत हित लाय ।
"दया" अमरपुर जात हैँ जग सुपनो बिसराय ॥ १४
सतगुरु ब्रह्म सरूप हैं मनुष भाव मत जान ।
देह भाव मानैँ "दया" ते हैं पसू समान ॥ १५ ॥
नित प्रति बंदन कीजिये गुरु कूँ सीस नवाय ।
"दया" सुखी कर देत हैँ हरि सरूप दरसाय ॥ १६

॥ चौपाई ॥

गुरु बिन ज्ञान ध्यान नहिँ होवै ।
गुरु बिन चौरासी मग जोवै ॥
गुरु बिन राम भक्ति नहिँ जागै ।
गुरु बिन असुभ कर्म नहिँ त्यागै ॥
गुरु ही दीन-दयाल गोसाईँ ।
गुरु सरनै जो कोई जाई ॥
पलटैँ करैँ काग सूँ हंसा ।
मन को मेटत हैँ सब संसा ॥

गुरु हैं सब देवन के देवा ।
गुरु को कोउ न जानत भेवा ॥
करुना-सागर कृपा-निधाना ।
गुरु है ब्रह्म रूप भगवाना ॥
हानि लाभ दोउ सम करि जानैं ।
हृदै ग्रंथ[1] नीकी बिधि भानैं[2]
दै उपदेस करैं भ्रम नासा ।
"दया" देत सुख-सागर बासा ॥
गुरु को अहि निसि[3] ध्यान जो करिये ।
बिधिवत सेवा में अनुसरिये[4] ॥
तन मन सूँ अज्ञा में रहिये ।
गुरु अज्ञा बिन कछू न करिये ॥
गुरु अज्ञा मेटीजे नाहीं ।
भावै देह पात है जाही ॥
होय गुरमुखी जग में रहै ।
सिर पर सीत ऊस्न[5] सब सहै ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

अज्ञा-कारी गुरमुखी जो ऐसा सिष होय ।
तिन के पुन्न प्रताप ते आनँद रूपी होय ॥ १८ ॥

॥ सुमिरन का अंग ॥

॥ दोहा ॥

श्री गुरदेव दया करी मैं पायो हरि नाम ।
एक राम के नाम तें होत सँपूरन काम ॥ १ ॥
हरि भजते लागै नहीं काल ब्याल दुख-झाल
ता तें राम सँभालिये "दया" छोड़ जग-जाल ॥ २ ॥

(१) गाँठ । (२) तोड़ना, खोलना । (३) दिन रात । (४) लगिये । (५) सरदी गरमी ।

"दयादास" हरि नाम लै या जग में ये सार ।
हरि भजते हरि ही भये पायौ भेद अपार ॥ ३ ॥
मनमोहन को ध्याइये तन मन करिये प्रीत ।
हरि तज जे जग में पगे देखौ बड़ी अनीत ॥ ४ ॥
जे जन हरि सुमिरन बिमुख तासूँ मुखहुँ न बोल ।
राम रूप में जे पगे तासूँ अंतर खोल ॥ ५ ॥
राम नाम के लेतही पातक झरैं अनेक ।
रे नर हरि के नाम की राखो मन में टेक ॥ ६ ॥
राम कहो फिर राम कहु राम नाम मुख गाव ।
यह तन बिनस्यो जातु है नाहिन आन उपाव ॥ ७ ॥
अर्ध नाम[1] के लेतही उधरे पतित अपार ।
गज गनिका अरु गीध बहु भये पार संसारं ॥ ८ ॥
सोवत जागत हरि भजो हरि हिरदे न बिसार ।
डोरो गहि हरि नाम की "दया" न टूटै तार ॥ ९ ॥
श्री गोबिंद के गुनन तेहिं अनत[2] रहौ दिन रैन ।
"दया" दया गुरदेव की जासूँ होय सुचैन ॥ १० ॥
नारायन के नाम बिन नर नर नर जा चित्त ।
दीन भयो बिल्लात है माया बसि ना थित्त[3] ॥ ११ ॥
नारायन नरदेह में पैयत है ततकाल ।
सतसंगति हरि भजन सूँ काढ़ो तृस्ना ब्याल[4] ॥ १२ ॥
"दया" जगत में यह नफो[5] हरि सुमिरन कर लेह ।
छल-रूपी छिन-भंग है पाँच तत्त की देँह ॥ १३ ॥
"दया" देँह सूँ नेह तजि हरि भजु आठौ जाम ।
मन निर्मल ह्वै तनिक में पावै निज बिस्राम ॥ १४ ॥

---

(१) रॉ=राम । (२) गाना । (३) भगवत के नाम बिना मन डावाँडोल रहता है ; ढिकाने से आस रख कर गिड़गिड़ाता है और माया के बस में रह कर थिर नहीं ह
(४, साँप । (५) नफ़ा ।

"दया" नाव हरि नाम की सतगुरु खेवनहार ।
साधू जन के संग मिलि तिरत न लागै बार ॥ १५ ॥

॥ सूर का अंग ॥

॥ दोहा ॥

गुरु सब्दन कूँ ग्रहण करि बिषयन कूँ दे पीठ ।
गोबिँद रूपी गदा[1] गहि मारो करमन डीठ[2] ॥ १ ॥
जग तजि हरि भजि दया गहि क्रूर कपट सब छाँड़ ।
हरि सन्मुख गुरु-ज्ञान गहि मनहीं सूँ रन माँड़[3] ॥ २ ॥
सूरा वही सराहिये बिन सिर लड़त कबंद[4] ।
लोक लाज कुल कान कूँ तोड़ि होत निर्बंद ॥ ३ ॥
सुनत सब्द नीसान[5] कूँ मन में उठत उमंग ।
ज्ञान गुरज[1] हथियार गहि करत जुद्ध अरि[6] संग ॥ ४ ॥
जो पग धरत सो दृढ़ धरत पग पाछे नहिँ देत ।
अहंकार कूँ मार करि राम रूप जस लेत ॥ ५ ॥
आप मरन भय दूर करि मारत रिपु[6] को जाय ।
महा मोह दल दलन करि रहै सरूप समाय ॥ ६ ॥
सूरा सन्मुख समर[7] में घायल होत निसंक ।
यों साधू संसार में जग के सहैं कलंक ॥ ७ ॥
कायर कँपै देख करि साधू को संग्राम ।
सीस उतारै भुइँ धरै जब पावै निज ठाम ॥ ८ ॥

॥ प्रेम का अंग ॥

"दया" प्रेम उनमत्त जे तन की तनि[8] सुधि नाहिँ ।
झुके रहैं हरि रस छके थके नेम व्रत नाहिँ ॥ १ ॥

---

(१) सोंटा । (२) बुरी निगाह या असर । (३) लड़ाई ठानो । (४) एक राक्षस का ना[म] जिसका सिर गदा की चोट लगने से धड़ के भीतर धस गया था लेकिन फिर भी [व]ह बराबर लड़ता था । (५) डङ्का । (६) दुश्मन । (७) लड़ाई । (८) ज़रा सी ।

"दया" प्रेम प्रगट्यौ तिन्हैं तन की तनि[1] न सँभार।
हरि रस मैं माते फिरैं गृह बन कौनबिचार ॥ २ ॥
प्रेम मगन जे साधवा बिचरत रहत निसंक।
हरि रस के माते "दया" गिनैं राव ना रंक ॥ ३ ॥
प्रेम मगन जे साध जन तिन गति कही न जात।
रोय रोय गावत हँसत "दया" अटपटी बात ॥ ४ ॥
हरि रस माते जे रहैं तिन को मतो अगाध।
त्रिभुवन की संपति "दया" तृन सम जानत साध ॥ ५ ॥
प्रेम मगन गद्‌गद् बचन पुलकि रोम सब अंग।
पुलकि रह्यौ मन रूप मैं "दया" न ह्वै चित भंग ॥ ६ ॥
कहूँ धरत पग परत कहुँ डिगमिगात सब देँह।
दया मगन हरि रूप मैं दिन दिन अधिक सनेह ॥ ७ ॥
हँसि गावत रोवत उठत गिरि गिरि परत अधीर।
पै हरि रस चसको[2] "दया" सहै कठिन तन पीर ॥ ८ ॥
प्रेम-पीर अतिही बिकल कल न परत दिन रैन।
सुंदर स्याम सरूप बिन "दया" लहत नहिँ चैन ॥ ९ ॥
बिरह ज्वाल उपजी हिये राम-सनेही आय।
मन-मोहन सोहन सरस तुम देखन दा[3] चाय ॥ १० ॥
बिरह बिथा सूँ हूँ बिकल दरसन कारन पीव।
"दया" दया की लहर कर क्यों तलफावो जीव ॥ ११ ॥
जनम जनम के बीछुरे हरि अब रह्यौ न जाय।
क्यों मन कूँ दुख देत हौ बिरह तपाय तपाय ॥ १२ ॥
पंथ प्रेम को अटपटो कोइयन जानत बीर।
कै मन जानत आपनो कै लागी जेहिँ पीर ॥ १३ ॥

---

(१) जरा सी। (२) चसका=मज़ा। (३) का।

काग उड़ावत थके कर नैन निहारत बाट।
प्रेम सिन्ध में पर्‌यो मन ना निकसन को घाट[1] ॥१४॥
आसा फाँसा तोर करि आप रहे लूकाय[2]।
सुन्दर स्याम सरूप तुम कहाँ रहे घर छाय ॥१५॥
बौरी ह्वै चितवत फिरूँ हरि आवैं केहि ओर।
छिन उठूँ छिन गिरि परूँ राम-दुखी मन मोर ॥१६॥
सोवत जागत एक पल नाहिन बिसरौं तोहिं।
करुना-सागर दया-निधि हरि लीजै सुधि मोहिं ॥१७॥
चित चितवन हरि रूप बिन मो मन कछु न सुहाय।
हरि हरखित हमकूँ "दया" कब रे मिलैंगे आय ॥१८॥
रे मन तू निकसत नहीं है तू बड़ा कठोर।
सुन्दर स्याम सरूप बिन क्यों जीवत निस भोर ॥१९॥
प्रेम-पुंज प्रगटै जहाँ तहाँ प्रगट हरि होय।
"दया" दया करि देत हैं श्री हरि दर्सन सोय ॥२०॥

॥ बैराग का अंग ॥

॥ दोहा ॥

"दया कुँवर" या जक्त में नहीं आपनो कोय।
स्वारथ-बंधी जीव है राम नाम चित जोय ॥ १ ॥
"दया सुपन संसार में ना पचि मरिये बीर[3]।
बहुतक दिन बीते बृथा अब भजिये रघुबीर ॥२॥
"दया कुँवर" या जक्त में नहीं रह्यो थिर कोय।
जैसा बास सराँय को तैसो यह जग होय ॥ ३ ॥
जैसो मोती ओस को तैसो यह संसार।
बिनसि जाय छिन एक में "दया" प्रभू उर धार ॥४॥

---

(१) कायदा है कि अगर कोई जीव नदी मे बहा जाता हो तो कौवे उसे मुर्दा समझ कर खाने को दौड़ते हैं। (२) छिप जाना। (३) बहिन, भाई।

भाई बंधु कुटुम्ब सब भये इकट्ठे आय।
दिना पाँच को खेल है "दया" काल ग्रसि जाय ॥५॥
तात मात तुम्हरे गये तुम भी भये तयार।
आज काल्ह में तुम चलौ "दया" होहु हुसियार ॥६॥
छाँड़ो बिषै बिकार कूँ राम नाम चित लाव।
"दया कुँवर" या जगत में ऐसो काल बिताव ॥७॥
असु[२] गज[३] अरु कंचन[४] "दया" जोरे लाख करोर।
हाथ झाड़ रीते गये भयो काल को जोर ॥८॥
रावन कुम्भकरन गये दुरजोधन बलवंत।
मार लिये सब काल ने ऐसे "दया" कहंत ॥ ९ ॥
तीन लोक नौ खंड के लिये जीव सब हेर।
"दया" काल परचंड है मारै सब कूँ घेर ॥ १० ॥
बड़ो पेट है काल को नेक न कहूँ अघाय।
राजा राना छत्र-पति सब कूँ लीले जाय ॥ ११ ॥
बहे जात हैं जीव सब काल नदी के माहिँ।
"दया" भजन नौका[५] बिना उपजि उपजि मरि जाहिँ ॥१२॥
छिन छिन बिनस्यो जात है ऐसो जग निरमूल।
नाम रूप जो धूस[६] है ताहि देख मत भूल ॥ १३ ॥
बिनसत बादर बात[७] बसि नभ में नाना भाँति।
इमि नर दीसत काल बसि तऊ न उपजै साँति ॥१४॥
चरनदास सतगुर मिले समरथ परम दयाल।
दीन जानि कीन्ही दया मो पर भये दयाल ॥१५॥

---

(१) दो दिन जन्म और मरन के छोड़ने से सप्ताह या हफ़्ते के पाँच दिन रह जा[ते]
हैं। (२) घोड़ा। (३) हाथी। (४) सोना। (५) नाव। (६) ढेर। (७) हवा।

॥ साध का अंग ॥

॥ दोहा ॥

जगत सनेही जीव है राम सनेही साध ।
तन मन धन तजि हरि भजैं जिन का मता अगाध ॥१॥
साध साध सब कोउ कहै दुरलभ साधू सेव ।
जब संगति ह्वै साध की तब पावै सब भेव ॥ २ ॥
दया दान अरु दीनता दीना-नाथ दयाल ।
हिरदै सीतल दृष्टि सम निरखत करैं निहाल ॥ ३ ॥
काम क्रोध मद लोभ नहिं खट बिकार करि हीन ।
पंथ कुपंथ न जानहीं ब्रह्म भाव रस लीन ॥ ४ ॥
राम टेक से टरत नहिं आन भाव नहिं होत ।
ऐसे साधू जनन की दिन दिन दूनी जोत ॥ ५ ॥
साध संग संसार में दुरलभ मनुष सरीर ।
सतसंगति सूँ मिटत है त्रिबिध ताप की पीर ॥ ६ ॥
साधू सिंह समान है गरजत अनुभव ज्ञान ।
करम भरम सब भजि गये "दया" दुर्‌यो[1] अज्ञान ॥ ७ ॥
साध रूप हरि आप हैं पावन परम पुरान ।
मेटैं दुबिधा जीव की सब का करैं कल्यान ॥ ८ ॥
साध संग छिन एक को पुन्न न बरन्यो जाय ।
रति[2] उपजै हरि नाम सूँ सबही पाप विलाय ॥ ९ ॥
कोटि जग्य व्रत नेम तिथि साध संग में होय ।
विषय व्याधि सब मिटत हैं सांति रूप सुख जोय ॥१०॥
साध संग महिमा अधिक गावत सेस महेस ।
ये जग में दाता बड़े देत दान उपदेस ॥ ११ ॥

---

(१) दूर हुआ । (२) लौ, प्रेम ।

साधन के संसा नहीं "दया" सर्ब सुख जान ।
मन की दुबिधा मेट करि कियो राम-रस पान ॥ १२ ॥
साधू बिरला जक्त में हर्ष सोक करि हीन ।
कहन सुनन कूँ बहुत हैं जन जन आगे दीन ॥ १३ ॥
साधू सोई जानिये जाके हिरदे राम ।
मान बड़ाई छोड़ कर सुमिरै आठो जाम ॥ १४ ॥
कलि केवल संसार में और न कोउ उपाय ।
साध संग हरि नाम बिन मन की तपन न जाय ॥१५॥
साध संग जग में बड़ो जो करि जानै कोय ।
आधो छिन सतसंग को कलमख डारै खोय ॥ १६ ॥

॥ अजपा का अंग ॥

॥ दोहा ॥

चरनदास गुरदेव ने मो सूँ कह्यो उचार ।
"दया" अहर[1] निसि[2] जपत रहुं सोहं सुमिरन सार ॥ १ ॥
नासा आगे दृष्टि धरि स्वाँसा में मन राख ।
"दया" दया करिके कह्यो सतगुर मो सूँ भाख ॥ २ ॥
पद्मासन सूँ बैठ करि अंतर दृष्टि लगाव ।
"दया" जाय अजपा जपो सुरति स्वाँस में लाव ॥ ३ ॥
अर्ध उर्ध मधि सुरति धरि जपै जु अजपा जाप ।
"दया" लहै निज धाम कूँ छुटै सकल संताप ॥ ४ ॥
स्वाँसउ स्वाँस बिचार करि राखै सुरत लगाय ।
"दया" ध्यान त्रिकुटी धरै परमातम दरसाय ॥ ५ ॥
"दया" कह्यो गुरदेव ने कूरम[3] को व्रत लेहि ।
सब इंद्रिन कूँ रोकि करि सुरत स्वाँस में देहि ॥ ६ ॥

---

(१) दिन । (२) रात (३) कछुआ जो सुरत ध्यान से अंडा सेता है ।

बिन रसना बिन माल कर अंतर सुमिरन होय ।
'दया' दया गुरदेव की बिरला जानै कोय ॥ ७ ॥
अजपा सोहं जाप तें त्रिविधि ताप मिटि जाहिँ ।
'दया' लहै निज रूप कूँ या में संसय नाहिँ ॥ ८ ॥
हृदय कमल में सुरति धरि अजपा जपै जो कोय ।
बिमल ज्ञान प्रगटै तहाँ कलमख डारै खोय ॥ ९ ॥

॥ सोरठा ॥

'दया' सकार[1] हँकार[2] अच्छर को जो जप करत ।
अंतर ह्वै उजियार तिमिर अविद्या सब हरत ॥ १० ॥
नाभि नासिका माहिँ गाजै सोहं सब्द धुनि ।
या में संसै नाहिँ 'दया' सुमिरि भव तरत मुनि ॥ ११ ॥

॥ दोहा ॥

सतगुर के परताप तें 'दया' कियो निरधार ।
अजपा सोहं जाप है परम गम्य निज सार ॥ १२ ॥
प्रथम पैठि पाताल सूँ धमकि चढ़ै आकास ।
'दया' सुरति नटिनी भई बाँधि बरत[3] निज स्वाँस ॥ १३ ॥
छिन छिन में उतरत चढ़त कला गगन में लेत ।
'दया' रीझि गुरदेवजू दान अभय पद देत ॥१४॥
चरनदास गुरु कृपा तें मनुवाँ भयो अपंग ।
सुनत नाद अनहद 'दया' आठौ जाम अभंग ॥ १५ ॥
घंटा ताल मृदंग धुनि सिंह गरज पुनि होय ।
'दया' सुनत गुरु कृपा तें बिरला साधू कोय ॥ १६ ॥
गगन मध्य मुरली बजै मैं जु सुनी निज कान ।
'दया' दया गुरदेव की परस्यो पद निर्वान ॥ १७ ॥

---

(१) सवेरे । (२) पुकार कर । (२) रस्सी ।

जहाँ काल अरु ज्वाल[1] नहिँ सीत उस्न नहिँ बीर।
'दया' परसि निज धाम कूँ पायो भेद गँभीर॥ १८॥
पिय को रूप अनूप लखि कोटि भान उँजियार।
'दया' सकल दुख मिटि गयो प्रगट भयो सुख सार॥ १९॥
अनँत भान उँजियार तहँ प्रगटी अद्भुत जोत।
चकचौंधी सी लगत है मनसा सीतल होत॥ २०॥
सेत सिँहासन पीव को महा तेज-मय धाम।
पुरुषोत्तम राजत तहाँ 'दया' करत परनाम॥ २१॥
बिन दामिन उँजियार अति बिन घन परत फुहार।
मगन भयो मनुवाँ तहाँ दया निहार निहार॥ २२॥
सदा एक रस रहन है ना कछु हुआ न होय।
ऐसो गुरमुख दया लहि तन मन डारै खोय॥ २३॥
चेतन रूपी आतमा बसै पिंड ब्रह्मंड।
ना करता ना भोगता अद्वै[2] अचल अखंड॥ २४॥
आवन जान बनै नहीं यह सब माया रूप।
मन बानी दृग सूँ अगम ऐसो तत्व अनूप॥ २५॥
ज्ञानी ज्ञान मगन रहै तन मन सुधि बिसराय।
परमानँद प्रापति भयो हरि सरूप को पाय॥ २६॥
अबिनासी चेतन पुरुष जग झूठो जंजाल।
हरि चितवन में मन मगन सुख पायो ततकाल॥ २७॥
तू चेतन्न सरूप है जग जड़ है भ्रम रूप।
सो तेरो अभ्यास है ताहि रतन मन भूप॥ २८॥
जग परनामी[3] है मृषा[4] तन-रूपी भ्रम-कूप।
न चेतन्न सरूप है अद्भुत आनँद रूप॥ २९॥

---

(१) जवाल। (२) एक ही, दूसरा नहीं। (३) परिणाम में, अंत में (४) वृथा

महा मोह की नींद में सोवत सब संसार ।
"दया" जगा गुर-दया सूँ ज्ञान भान उँजियार ॥३०॥
भोर भये गुरु ज्ञान सूँ मिटी नींद अंज्ञान ।
रैन अविद्या मिटि गई प्रगट्यो अनुभव भान ॥ ३१ ॥
जागत ही अज्ञान सूं दरस्यो हरि गुरु रूप ।
जिनके चरन परस 'दया' पायो तत्त्व अनूप ॥ ३२ ॥
गुन अतीत निरगुन अलख आदि निरञ्जन देव ।
चरनदास की कृपा सूँ 'दया' लह्यो सब भेव ॥ ३३ ॥
'दया' रूप अद्भुत लख्यो अकी[2] अमर अगाध ।
निरखत हीं सब मिटि गई काल ज्वाल अरु व्याध ॥ ३४ ॥
वही एक व्यापक सकल ज्यौं मनिका[3] में डोर ।
थिर चर कीट पतंग में 'दया' न दूजो और ॥ ३५ ॥
नेत नेत करि बेद जेहिँ गावत है दिन रैन ।
'दया कुँवर' चरनदास गुरु मोहिँ लखायो सैन ॥ ३६ ॥
चरनदास गुरदेव ने कीन्ही कृपा अपार ।
'दया कुँवर' पर दया करि दियो ज्ञान निज सार ॥३७॥
घट मठादि में रम रह्यो रमता राम जु होय ।
ज्ञान दृष्टि सूँ देखिये है अकासवत सोय ॥ ३८ ॥

॥ चौपाई ॥

ज्ञान रूप को भयो प्रकास ।
भयो अविद्या तम को नास ॥
सूझ पर्‌यो निज रूप अभेद ।
सहजे मिट्यो जीव को खेद ॥

---

(१) माया से रहित । (२) निराकार । (३) माला ।

ीव ब्रह्म आँतर[1] नहिँ कोय ।
एकै रूप सर्ब घट सोय ॥
जग बिबर्त[2] सूँ न्यारा जान ।
परम अद्वैव रूप निर्बान ॥
बिमल रूप व्यापक सब ठाँईं ॥
अरध उरध मधि रहत गुसाँईं
महा सुद्ध साच्छी चिद्रूप ।
परमातम प्रभु परम अनूप ॥
निराकार निरगुन निरबासी ।
आदि निरंजन अज अबिनासी ॥ ३९ ॥

॥ दोहा ॥

सकल ठौर मेँ रहत है सब गुन रहित अपार ।
"दया कुँवर" सूँ दया करि सतगुर कह्यो बिचार ॥ ४० ॥
सब साधन की दास हूँ मो मेँ नहिँ कछु ज्ञान ।
हरि जन मो पै दया करि अपनी लीजै जान ॥ ४१ ॥
चरनदास की कृपा सूँ मो मन उठी उमंग ।
दयाबोध बरनन कियो जहँ सुख की उठत तरंग ॥४२ ॥
जो या कूँ सीखै सुनै गावे तन मन लाय ।
दयाबोध के स्रवन ते भवसागर तिर जाय ॥ ४३ ॥
प्रेम प्रीति सूँ जो पढ़ै सरधा करि मन देत ।
सुफल काम सब होत है नेक लगाये हेत ॥ ४४ ॥
चरनदास की कृपा तेँ मन में उपज्यो चेत ।
दयाबोध बरनन कियो परमारथ के हेत ॥ ४५ ॥
संबत ठारा से समै पुनि ठारा गये बीति ।
चैत सुदी तिथि सातवीँ भयो ग्रंथ सुभ रीति ॥ ४६ ॥

---

(१) अंतर, भेद। (२) जिसमेँ रद्द बदल होय।

॥ बिनय मालिका ॥

॥ दोहा ॥

किस बिधि रीझत हौ प्रभू, का कहि टेरूँ नाथ ।
लहर मेहर जब हीँ करो, तब हीँ होऊँ सनाथ ॥ १ ॥
भयमोचन अरु सर्बमय, व्यापक अचल अखंड ।
दयासिंधु भगवानजू, ताकै सिव ब्रह्मंड ॥ २ ॥
ब्रह्म बिसंभर बासुदेव, बिस्वरूप बलबीर ।
ब्यास बोध बाधाहरन, व्यापक सकल सरीर ॥ ३ ॥
कान्हा कूरम[1]. कृपानिधि, केसव कृश्न कृपाल ।
कुँजबिहारी क्रीटधर, कंसासुर को काल ॥ ४ ॥
पारब्रह्म परमातमा, पुरुपोत्तम पर्महंस ।
पदमनाम पीताम्बर, परमेस्वुर परसंस ॥ ५ ॥
राम रमैया रमापति, रामचन्द्र रघुवीर ।
राघव रघुबर राघवा, राधारमन अहीर ॥ ६ ॥
अजर अमर अबिगत अमित, अनुभय अलख अभेव ।
अबिनासी आनंदमय, अभय सो आनँद देव ॥ ७ ॥
मकसूदन मोहन मदन, माधो मच्छ मुरार ।
मदहारी श्रीमुकुटधर, मधुपुर[2] मल्ल-पछार[3] , ॥ ८ ॥
गिरिधर गोबिन्द गोपधर, गरुड़ध्वज गोपाल ।
गोबर्धन श्रीगदाधर, गज-तारन ग्रह-साल[4] ॥ ९ ॥
सीतापति समरत्थ जू, साहब सालिगराम ।
सेस साइँ सहजहि सबल, सिंध-मथन श्री श्याम ॥ १० ॥
निःकलंक नरसिंघ जू, निरजन अलख अभेव ।
निराकार निरभय मगन, नारायन नित-देव ॥ ११ ॥

---

(१) कच्छप अवतार । (२) मथुरा । (३) वीरों को पछाड़ने वाले । (४) मगर के मारने वाले ।

दीनबन्धु दयाल जू, दीनानाथ दिनेस[1] ।
देवन देव दमोदरा, दसमुख-बध[2] अवधेस[3] ॥ १२ ॥
ईसुर ईस अगोचरा, अंतरजामी नाथ ।
ठाकुर श्रीहरि द्वारिका, दासन करन सनाथ ॥ १३ ॥
बद्रीपति व्याधा-हरन, बंसीधर रनछोर ।
परसराम बाराह बपु, पावन बन्दीछोर ॥ १४ ॥
चौरासी चरखान[4] को, दुःख सहो नहिँ जाय ।
दयादास तातेँ लई, सरन तिहारी आय ॥ १५ ॥
कर्म फाँस छूटै नहीँ, थकित भयो बल मोर ।
अब की बेर उबारि लो, ठाकुर बन्दीछोर ॥ १६ ॥
भवजल नदी भयावनी, किस बिधि उतरूँ पार ।
साहिब मेरी अरज है, सुनिये बारम्बार ॥ १७ ॥
पैरत थाको हे प्रभू, सूझत वार न पार ।
मेहर मौज जब ही करो, तब पाऊँ दरबार ॥ १८ ॥
कर्म रूप दरियाव से, लीजै मोहिँ बचाय ।
चरन कमल तर राखिये, मेहर जहाज चढ़ाय ॥ १९ ॥
निरपच्छी के पच्छ तुम, निराधार के धार ।
मेरे तुम हीँ नाथ इक, जीवन प्रान अधार ॥ २० ॥
काहू बल अप[5] देह को, काहू राजहि मान ।
मोहिँ भरोसो तेरही, दीनबंधु भगवान ॥ २१ ॥
हौँ गरीब सुन गोबिँदा, तुही गरीब-निवाज ।
दायादास आधीन के, सदा सुधारन काज ॥ २२ ॥
हौ अनाथ के नाथ तुम, नेक निहारो मोहिँ ।
दयादास तन हे प्रभु, लहर मेहर की होहि ॥ २३ ॥

---

(१) सूर्य (२) रावन क मारनवाले । (३) अयोध्या के राजा । (४
(५) अपने ।

नर देही दीन्ही जबै, कीन्हो कोटि करार ।
भक्ति कबूली आदि में, जग में भयो लबार ॥ २४ ॥

कछू दोष तुम्हरो नहीं, हमरी है तकसीर ।
बीचहिँ बीच बिवस भयो, पाँच पचीस के भीर ॥ २५ ॥

ऐँचा खैँची करत हैं, अपनी अपनी ओर ।
अब की बेर उबार लो, त्रिभुवन बंदी-छोर ॥ २६ ॥

तुम ठाकुर त्रैलोक-पति, ये ठग बस करि देहु ।
दयादास आधीन की, यह बिनती सुनि लेहु ॥ २७ ॥

हौं पाँवर[1] तुम हौ प्रभू, अधम-उधारन ईस ।
दयादास पर दया हो, दयासिंधु जगदीस ॥ २८ ॥

ठग पापी कपटी कुटिल, ये लच्छन मोहिँ माहिँ ।
जैसो तैसो तेर ही, अरु काहू को नाहिँ ॥ २९ ॥

जेते करम हैं पाप के, मोसे बचे न एक ।
मेरी ओर लखो कहा, बिर्द बानो तन देख[2] ॥ ३० ॥

अधम उधारन बिरद[3] सुन, निडर रह्यौं मन माँहिँ
बिर्द बानो की हार देव, की तारो गहि बाँहिँ ॥ ३१ ॥

असंख जीव तरि तरि गये, लै लै तुम्हरो नाम ।
अबकी बेरा आप जी, परो मुगध[4] से काम ॥ ३२ ॥

जो जाकी ताके सरन, ताको ताहि खभार[5] ।
तुम सब जानत नाथ जू, कहा कहौं बिस्तार ॥ ३३ ॥

पूजा अरचन बंदगी, नहिँ सुमिरन नहिँ ध्यान ।
प्रभुजी अब राखे बने, बिर्द बाने की कान[6] ॥ ३४ ॥

---

(१) नीच । (२) बिरद अर्थात नीच के उद्धार करने का जो बाना आप[illegible] उसकी ओर देखिये । (३) यहाँ बिरद का अर्थ यश है । (४ मूढ़ । (५) [illegible]
(६) लाज ।

नहिँ संजम नहिँ साधना, नहिँ तीरथ ब्रत दान ।
मात भरोसे रहत है, ज्योँ बालक नादान ॥ ३५ ॥
लाख चूक सुत से परै, सो कछु तजि नहिँ देह ।
पोष चुचुक[1] ले गोद मेँ, दिन दिन दूनों नेह ॥ ३६ ॥
दुख तजि सुख की चाह नहिँ, नहिँ बैकुंठ बेवान ।
चरन कमल चित चहत हौँ, मोहिँ तुम्हारो आन[2] ॥ ३७ ॥
तन मद धन मद राज मद, अंत काल मिटि जाय ।
जिन के मद तेरो प्रभू, तेहिँ जम काल डेराय ॥ ३८ ॥
सदन[3] कसाई देखि कै, को नहिँ देत बड़ाइ ।
बड़े बिरछ की छाँह मेँ, को नहिँ बिलमत आइ ॥ ३९ ॥
धूप हरै छाया करै, भोजन को फल देत ।
सरनाये[4] की करत है, सब काहू पर हेत ॥ ४० ॥
कलप वृच्छ के निकट हीँ, सकल कल्पना जाय ।
दयादास ता तें लई, सरन तिहारी आय ॥ ४१ ॥
देह धरैँ संसार मेँ, तेरो कहि सब कोय ।
हाँसी होय तौ तेरिही, मेरी कछू न होय ॥ ४२ ॥
जो नहिँ अधम उधारनो, तौ नहिँ गहते फेंट ।
बिर्द की पैज[5] सम्हारि लो, सकल चूक को मेट ॥ ४३ ॥
जो मेरे करमन लखो, तौ नहिँ होत उबार ।
दयादास पर दया करि, दीजे चूक बिसार ॥ ४४ ॥
चकई कल मेँ होत है, भान उदय आनँद ।
दयादास के दृगन तेँ, पल न टरो ब्रज-चँद ॥ ४५ ॥
हौँ अनाथ तोहिँ बिनय करि, भय सोँ करूँ पुकार ।
दयादास तन हेर प्रभु, अब के पार उतार ॥ ४६ ॥

(१) चुपकार कं । (२) टेक, सौगंध । (३) एक भारी भक्त का नाम जो कसाई थे । (४) सरन आय । (५) प्रन ।

मलयागिर के निकटहीँ, सब चंदन हो जात ।
छूटै करम कुबासना, महा सुगँध महकात ॥ ४७ ॥
लोहा पारस के निकट, कंचन ही सो होय ।
जितना चाहै लै करै, लोहा कहै न कोय ॥ ४८ ॥
जैसे सूरज के उदय, सकल तिमिर नस जाय ।
शरने तुम्हारी हे प्रभू, क्यों अज्ञान रहाय ॥ ४९ ॥
अनँत भानु तुम्हरी मेहर, कृपा करो जब होय ।
दयादास सूझै अगम, दिव्य दृष्टि तन होय ॥ ५० ॥
तीन लो में हे प्रभू, तुम हीँ करो सो होय ।
सुर नर मुनि गंधर्व जे, मेटि सकैँ नहिँ कोय ॥ ५१ ॥
बेर बेर चूकत गयेँ, दीजै गुसा[१] बिसार ।
मिहरबान होइ रावरे[२], मेरी ओर निहार ॥ ५२ ॥
दया दीन पर करत हो, सो किमि लेखी जाहि ।
बेद बिरद बोलत फिरै, तीन लोक के माहिँ ॥ ५३ ॥
बज्रै तिनका करत हो, तिनकै बज्र बनाय ।
मेहर तुम्हारी हे प्रभू, सागर गिरि[३] उतराय ॥ ५४ ॥
बड़े बड़े पापी अधम, तारत लगी न बार ।
पूँजी लगै कछु नंद की, हे प्रभू हमरी बार[४] ॥ ५५ ॥
सीस नवै तो तुमहिँ कूँ, तुमहिँ सुँ भाखूँ दीन ।
जो झगरौँ तौ तुमहिँ सूँ, तुम चरनन आधीन ॥ ५६ ॥
और नजर आवै नहीँ, रंक राव का साह ।
चिरहटा के पंख ज्योँ, थोथो काम देखाइ[५] ॥ ५७ ॥

---

(१) क्रोध। (२) हुजूर। (३) पहाड़। (४) नन्दजी श्रीकृष्ण के पिता का नाम है—दयादास की बिनती है कि हे प्रभु आप ने बड़े बड़े पापियों को तार दिया अब मेरे तारने के लिये क्या आप की पूँजी चुक गई और अपने बाबा से लेनी पड़ेगी। (५) जिस तरह चिड़िया का बच्चा डैना फड़फड़ाता है पर उड़ नहीं सकता ऐसी ही मेरी दशा है।

तेरी दिस आसा लागी, भ्रमत फिरौं सब दीप ।
स्वाँती मिलै सनाथ हो, जैसे चातृक सीप ॥ ५८ ॥
चित चातृक रटना लगी, स्वाँती बूँद की आस ।
दया-सिंध भगवान जू , पुजवौ अब की आस ॥ ५९ ॥
तुमहीं सूँ टेका[1] लगै, जैसे चन्द्र चकोर ।
अब कासूँ झंखा करौं, मोहन नन्दकिसोर ॥ ६० ॥
स्याम घटा घन देखि कै, बोलत गहगह मोर ।
ब्रजबासी तिमि जी उठैं, चितवत हरि की ओर ॥ ६१ ॥
कब को टेरत दीन भो[2] , सुनो न नाथ पुकार ।
की सरवन ऊँचौ सुनो, की बिर्द दियो बिसार ॥ ६२ ॥
सुनत दीनता दास की, बिलम कहूँ नहिँ कीन ।
दयादास मन कामना, मनभाई कर दीन ॥ ६३ ॥
हाथी बूड़ो सूँड़ लौं, जब हीं करी पुकार ।
ग्राहतें आन छुड़ाइया, लगी न रंचक बार[3] ॥ ६४ ॥
टेर सुनी प्रहलाद की, नरसिंह हो बनि आय ।
हिरनाकुस को मारि कै, जन को लीन बचाय[4] ॥ ६५ ॥
सकल मेघ लै इन्द्र जब, ब्रज पै बरसो आय ।
गोबरधन नख पै धरो, सब ब्रज लियो बचाय[5] ॥ ६६ ॥

---

(१) टेक। (२) होकर। (३) एक हाथी जो नदी में नहाने उतरा था मगर पकड़ कर खींचे लिए जाता था हाथी ने भगवान को टेरा तब उन्हों ने प्रगट होकर उसे उबारा।

(४) प्रहलाद भक्त का पिता हिरण्यकश्यप बड़ा ईश्वर-द्रोही था और अपने बेटे को राम नाम लेने से रोकता था। आखिर को क्रोध में भर कर उस ने प्रहलाद के मार डालने को खड्ग उठाया कि उसी समय ईश्वर ने नरसिंह रूप में खंभे से (जिसमें प्रहलाद को उनके बाप ने बाँधा था) प्रगट होकर हिरण्यकश्यप का बध किया और प्रहलाद की रक्षा की।

हरी हरी कहि द्रोपदी, बाढ़ो चीर अपार।
लज्जा राखी सभा में, दूसासन गयो हार[1] ॥ ६७ ॥
बिप्र सुदामा बापुरो, कियो छिनक में भूप।
कंचन महल रतन जड़े, बिस्नु पुरी के रूप[2] ॥ ६८ ॥
धना जाट ने रेत बइ[3], गोहूँ दियो लुटाय।
मौजैं श्रीगोपाल की, हरी न खेत समाय[4] ॥ ६९ ॥
नाम देव की गाय प्रभु, दीन्ही जबै जियाय[5]।
पानी तैं पैदा कियो, कहो कठिनता क्याय ॥ ७० ॥

की जिस पर इन्द्र ने क्रोध में भर कर सब बादलों को आज्ञा की कि मूसला धार बरस कर गोकुल गाँव को बहा दो। श्रीकृश्न ने गोबर्द्धन पहाड़ को अपनी उँगली के नाखून पर उठा कर गोकुल गाँव को उसकी छाया के तले बचा लिया।

(१) युधिष्ठिर कौरवों के साथ जुआ खेलने में अपनी स्त्री द्रोपदी को हार गये तब दुस्सासन नामी कौरव ने द्रोपदी को सभा में नंगी करने के लिये उसकी सारी खींची। द्रोपदी ने किसी को सहायक न देखकर अति दीनता से अपने इष्ट श्रीकृश्न का स्मरन किया जिन्हों ने सारी को इतना बढ़ाया कि दुस्सासन खींचते २ हार गया पर उसका अंत न पाया।

(२) श्रीकृश्न के लड़कपन के मित्र और एक साथ पढ़ने वाले सुदामाजी ऐसे दरिद्र हो गये कि खाने का ठिकाना न रहा और भीख माँगने लगे। एक बार अपनी स्त्री की सलाह से थोड़े से चावल के कन भीख माँग कर श्रीकृश्न की भेंट को ले गये। श्रीकृश्न ने उनकी गैरहाजिरी में उनकी कुटिया को सोने का महल कर दिया। (३) बोया।

(४) धना भक्त जाति के जाट थे और अपने बाप की खेती करते थे साथ ही साधु सेवा में तत्पर रहते थे। एक बार अपने पिता की आज्ञा से खेत में बोने को गेहूँ लिये जाते थे राह में साधू मिले गेहूँ उनको दे दिया और खेत में झूठा ही हेंगा चला दिया जिसमें लोग समझें कि बोया हुआ खेत है। भगवत कृपा से उस बेबोये खेत में सब से अच्छी फ़सल हुई।

(५) नामदेव भक्त जाति के छीपी थे एक बार बादशाह ने उनको पकड़ बुलाया और कहा कि तुमने सिद्धाई का जाल बिछा रक्खा है हमारी गाय मर गई है उसे तुरत जिला दो नहीं तो तुम सूली पर चढ़ा दिये जाओगे। नामदेव जी ने बहुत कहा कि हम तो महा नीच जाति के मनुष्य हैं कोई गुन नहीं रखते पर जब बादशाह ने हठ किया तब

पीपा गिरो समुद्र में, डूबन लगो सरीर ।
किरपा करि दरसन दियो, मेटी तन की पीर[१] ॥ ७१ ॥
सुगधन कीन्ही मसकरी, सब पुर न्योत बुलाय ।
द्वारे जबै कबीर के, बरदी दई डराय[२] ॥ ७२ ॥
भैंटो जब रैदास कूँ, लीन्हो भुजा पसार ।
हरि लीला रीझै नहीं, अचरज कहो अपार[३] ॥ ७३ ॥
बधिक कर्म नित करत थे, सो कीन्हो ऋषिराय ।
रामायन सत कोटि सोँ, महिमा कही न जाय[४] ॥ ७४ ॥
सुरा पान अम्बुक भखै, नित्त कर्म बिभिचार ।
अजामील से अधम कूँ, तारत लगी न बार[५] ॥ ७५ ॥

एक पद बना कर भगवत चरन में प्रार्थना की जिसकी पहिली कड़ी यह है—"बिनती सुन जगदीस हमारी।" इन पद के पढते ही गाय जी उठी ।

(१) पीपा भक्त हरि दर्शन को द्वारिका गये पर उनके पहुँचने के पहिले द्वारिका समुद्र में डूब गई थी। पीपाजी बेधड़क समुद्र में कूद पडे और भीतर जाकर ईश्वर का साक्षात दर्शन पाया ।

(२) एक वार काशी के पंडितों ने कबीर साहब की ईर्षा बस उनकी हँसी कराने को सारे नगर में कहला भेजा कि कबीर आज सब को अन्न बाँटेंगे। कबीर साहिब को इसकी कुछ खबर न थी पर जब भीड़ मँगनोँ की आनी शुरू हुई तो चुपके से घर के बाहर निकल गये। उनकी गैरहाजिरी में भगवंत ने अपने भक्त की लाज रखने को सैकड़ों बैल गेहूँ उनके द्वारे पर डलवा दिये जो बाँटते बाँटते भी नहीं चुका [देखो जीवन-चरित्र कबीर साहिब का जो उनकी शब्दावली के भाग १ में छपा हैं]।

(३) रैदासजी भक्त जो जाति के चमार थे और काशी के पंडित लोग चित्तौड़ की रानी की सभा में बुलाये गये। वहाँ भगवान की मूर्ति सिंहासन पर रक्खी थी। पंडितों ने बहुत कुछ मंत्र पढ़े पर मूर्ति न हिली और रैदास जी के बिनय पर सिंहासन छोड़ कर उनकी गोद में आ बैठी) [देखो जीवन-चरित्र रैदास जी का उनकी बानी के आदि में]।

(४) वालमीकि जी ऋषेश्वर जिनकी बनाई हुई वालमीकि रामायन है जाति के बहेलिया थे।

(५) अजामिल जाति का ब्राह्मन था पर अति कुकर्मी व शराबी। एक दिन भाग से उसे साध सेवा मिली और उसने दीनता की जिस पर साध महात्मा ने बर

सेवरी जाति असौच अति, करी ऋषिन सिरताज।
फल खाये अति प्रीति सूँ, महिमा रही बिराज[1] ॥ ७६ ॥
करमा तेलिन बावरी, जा पर भये उदार।
पहिल थार जा को चढ़ै, राख्यो जिन दरबार[2] ॥ ७७ ॥
सदन कसाई पै जवै, दया करी गोपाल।
तारत लागी बार नहिँ, छूट गयो भ्रम जाल[3] ॥ ७८ ॥
सेना भगत को आप हरि, संसय कीन्हो दूर।
मेहरबान ह्वै दरस दिय, राखे निकट हजूर[4] ॥ ७६ ॥

दिया कि तुझको वेटा होगा उसका नाम नारायन रखना इससे तेरा कल्यान हो जायगा। कुछ दिन पीछे बेटा हुआ और उस से अजामिल को ऐसी प्रीति हुई कि एक दम सामने से न हटाता था—मरते समय उसी का नाम (नारायन) रटता हुआ प्रान छोड़ा और इस नाम के प्रताप से स्वर्ग मे वास पाया।

(१) सेवरी भक्त जाति की भिल्लन थी जब श्रीरामचन्द्र बनोवास मे थे तो उसकी कुटी पर गये और उसके जूठे बैर जो वह दाँत से कुतर २ और चीख २ कर श्रीरामचन्द्र के भोग को लाइ उन्हें बड़े चाव से खाया और उसके पाँव आप धोकर उस जल को पंपासर में डाला तब उस तालाब का सड़ा हुआ पानी निर्मल हुआ।

(२) कर्मा बाई परम भक्त थीं जो जगन्नाथजी के लिये वात्सल्य भाव से बड़े तड़के उठकर बिना नहाये धोये खिचड़ी बना कर भोग लगाया करती थीं और जगन्नाथजी साक्षात बिराजमान हो कर ग्रहन करते थे। अब तक जगन्नाथजी को अनेक प्रकार के भोग के पहिले कर्मा बाई के नाम की खिचड़ी ही भोग मे धरी जाती है और कहते है कि छप्पन प्रकार के और भोगों से वह बढ़ कर स्वादिष्ट होती है।

(३) सदन भक्त जाति के कसाई थे और पहिले बकरा मार कर माँस बेचा करते थे। एक बेर कोई पाहुन उनके घर ऐसे समय आया जब घर मे मांस न था। सदन ने चाहा कि एक बकरे का छोटा अंग काट के काम चला लिया जाय परन्तु पास जाते ही बकरा बोला कि हमारे तुम्हारे सिर काटे का वैर चुकना है सो काट लो और अंग नहीं छू सकते। इसी पर सदन को ज्ञान आया और फिर वह ऐसे भारी भक्त हुये जिन की आज तक कीर्त्ति है।

(४) सेना भक्त जाति के नाई थे और राजा की हजामत बनाया करते थे। एक दिन भगवत ध्यान में लौलीन हो जाने से वह राजा के यहाँ समय पर न पहुँच सके

कुटिल कर्म कर आइती, कुच सोँ बिष लपटाय ।
ता को तारो छिनक में, सब औगुन बिसराय[1] ॥ ८० ॥

लोनी साजी बिदुर की, पाई प्रीति लगाय ।
दुरजोधन से भूप को, दीन्हों गर्ब घटाय[2] ॥ ८१ ॥

नरसी महता हेत प्रभु, माढ़ी आय दुकान ।
स्यामल सेठ कहाइया, दीनबन्धु भगवान[3] ॥ ८२ ॥

तो भगवान आप सेना का भेष धर कर राजा की हजामत बना आये यह हाल सेना जी को मालूम होने पर प्रचंड भक्ति जाग उठी और ईश्वर का साक्षात दर्शन पाया ।

(१) पूतना राक्षसी अपनी छाती में बिष लगा कर श्रीकृश्न को उन की बाल अवस्था में दूध पिलाने आई पर श्रीकृश्न ने छाती में मुँह लगा कर उसी राह से उस का प्रान खींच लिया और उस को स्वर्ग में बासा दिया ।

(२) बिदुरजी श्रीकृश्न के समय में बड़े भक्त हुए जो अति निर्द्धन थे । एक दिन कौरवों के राजा दुर्योधन ने श्रीकृश्न का न्योता किया और बिदुरजी ने भी जिन्हें राजा के न्योते का हाल मालूम न था श्रीकृश्न को खाने को बुलाया । श्रीकृश्न ने राजा का गर्व तोड़ने और अपने भक्त का सन्मान करने को पहिले बिदुर के घर जा कर अलोने साग का भोग लगाया पीछे से राजा के यहाँ गये ।

(३) नरसी गुजरात देश के बासी थे जिनकी प्रचंड भगवत् भक्ति प्रसिद्ध है । इन की महिमा ग्रंथों में बहुत कुछ गाई है । जो कथा इस साखी में लिखी है वह यों है कि जब कि नरसीजी दान देते २ निर्द्धन हो गये थे उस समय कुछ साधू उन के पास आये और द्वारिका की जात्रा के लिये खर्च माँगा । नरसीजी ने बहुत समझाया कि हमारे पास एक कौड़ी नहीं है पर वह न माने और कहा कि नगद नहीं है तो हुंडी लिख दो । आखिर को नरसीजी ने लाचार हो कर अपने भगवंत के ऊपर साँवलिया साह नाम से हुंडी लिख दी कि द्वारिका में उनकी दुकान है वहाँ से रुपया मिलेगा । साधू लोग प्रसन्न हो कर द्वारिका में आये और वहाँ बहुत खोजा पर साँवलिया साह की कोई दुकान न निकली तब क्रोध मे भर कर यह ठान ठानी कि गुजरात में लौट कर नरसीजी को जिन्होंने हम लोगों को धोखा दिया मार डालेंगे । यह दशा देख कर ईश्वर आप साँवलिया साह सेठ बन कर साधुओं को रास्ते से लौटा ले गये और एक घर को अपनी दुकान बतला कर वहाँ से हुंडी का दाम उन के हवाले किया ।

जमला अर्जुन वृक्ष सो, तट जमुना के तीर ।
तारत बार लगी नहीँ, दया सिंधु बलबीर[1] ॥ ८३ ॥

राजा नृग सो कूप मेँ, गिरगिट हो बिलखाय ।
स्राप फाँस तेँ काढ़ि कै, तार दियो जदुराय[2] ॥ ८४ ॥

विद्या धर अजगर महा, आयो निकट बनाय ।
दिव्या देह नई भई, सुर पुर दियो पहुँचाय[3] ॥ ८५ ॥

---

(१) कुबेर के दो बेटे नल और कूवर ऐसे मदान्ध थे कि एक बार अपनी स्त्रियोँ के साथ नदी में नंगे नहा रहे थे उसी समय नारद मुनि आये। इन को देख कर स्त्रियों ने तो वस्त्र पहिन लिया पर वह दोनोँ मर्द वैसे ही नंगे नहाते रहे। नारद मुनि ने उन के अहंकार पर क्रोध करके सराप दिया कि जैसे तुम जड़ हो वैसी ही जोनि भुगतो और पेड़ हो जाव जिस पर यह दोनोँ जमला और अर्जुन नाम के वृक्ष हो गये। एक दिन श्रीकृस्न को बालअवस्था में उन की माँ जसोदा जी ने ओखली से बाँध दिया था श्रीकृस्न इस ओखली को घसीटते हुए इन दोनोँ पड़ के बीच में से निकले और उन में ओखली को फँसा कर ऐसा झटका दिया कि दोनोँ पेड़ गिर गये और नल व कूवड़ हाथ जोड़ कर सामने खड़े हो गये।

(२) राजा नृग रोज एक लाख गऊ दान दिया करते थे एक बार कोई गऊ जो पहिले दिन दान हो चुकी थी नई गउवोँ में आ मिली और राजा ने उसे अनजाने मे दूसरे ब्राह्मन को संकल्प कर दिया। इस पर पहिले और दूसरे दिन के दान पाने वाले ब्राह्मनों मे झगड़ा मचा और दोनोँ राजा के पास न्याव को गये। दोनों वही गऊ लेने पर हठ करते थे इस लिये राजा की बुद्धि चकराई और सोच में पड़ कर दोनोँ की दलील पर सिर हिला देते। इस पर उन ब्राह्मनोँ ने सराप दिया कि तुम गिरगिट की तरह सिर हिलाते हो वही बन जावगे। इस लिये राजा नृग मरने पर गिरगिट की जोनि पाकर एक अंधे कुए में पड़े हुए थे जब कृस्नावतार हुआ तब श्रीकृष्न ने उन को तारा।

(३) राजा सुदर्शन विद्याधर ऐसा अहंकारी था कि एक दिन विमान पर सवार आकाश मार्ग में सैर कर रहा था जंगल में अंगिरा मुनि तपस्या कर रहे थे उन के ऊपर से राजा सो बार आया गया जिस से मुनि ने क्रोध में भर कर सराप दिया कि अजगर हो जा। राजा अजगर हो कर गिर पड़ा जब कृस्नावतार हुआ एक दिन नंदजी जो श्रीकृस्न को लेकर देवी के मंडप में गये थे उनके पाँव को मुँह से पकड़ लिया। नंदजी चिल्लाये कि हे कृष्न मुझे अजगर निगला चाहता है, बचाओ। श्रीकृष्न अजगर को

गनिका कामिन आगरी, सो तारी छिन माँहि।
दयादास की दयाल जू, आन गहो अब बाहिँ[१] ॥ ८६ ॥

सनमुख होत बिभीषनै, लंक दई बकसीस।
दासहिँ द्रोही जानिकै, रज मिलाय दससीस[२] ॥ ८७ ॥

मधव दासहिँ दुखित लखि, दया कीन जगदीस।
तन की बाधा मेटि कै, दई भक्ति बकसीस[३] ॥ ८८ ॥

रज परतहिँ पाहन तरी, गौतम ऋषि की नार।
कृपासिंधु महराज की, लीला अपरम्पार[४] ॥ ८९ ॥

ऊँचो आसन ध्रू को, महा अटल कर दीन।
सुर प्रदच्छिना देत हैँ, जुग जुग जस परबीन[५] ॥ ९० ॥

अपना चरन छुआ दिया कि वह सुन्दर मनुष्य बन गया और हाथ जोड़ कर श्रीकृष्न के सामने खड़ा हो गया।

(१) एक वेश्या के मरते समय जम-दूत सता रहे थे कि एक साधू आ गये वेश्या ने अति विलाप कर उनसे रक्षा माँगी। साधू जी ने उसे मंत्र ,उपदेश का अधिकारी न समझ कर कहा कि वह नाम लो जो तोते को पढ़ाते हैं। वेश्या ने राम नाम लिया और उसके उच्चारन करते ही विमान आया जिस पर चढ़ कर वह वैकुंठ को सिधारी।

(२) श्री रामचन्द्र ने अपने भक्त विभीषण के शत्रु रावन को मार कर लका का राज विभीषन को बख्शा।

(३) माधव दास जगन्नाथजी के एक प्रेमी पुजारी थे जिनको कोई कड़ी बीमारी हो गई थी। और पुजारी लोग उनको समुद्र के किनारे बैठा आये। रात को जब माधवदास जी को जाड़ा लगा तो जगन्नाथजी अपना पीताम्बर उनको ओढ़ा आये और आरोग कर दिया। सवेरे पीताम्बर मूर्ति पर न पाकर उसकी खोज पड़ी तो पुजारियों ने उसे माधव दास के तन पर पाकर उनकी महिमा जानी और आदर से मंदिर में लाये। तब से माधवदास की भक्ति दिन दिन बढ़ने लगी।

(४) गौतम ऋषि की स्त्री अहिल्या पति के सराप से पत्थर की चट्टान बन गई थी उसको श्रीरामचन्द्र ने अपने चरनों से स्पर्श कर के तार दिया।

(५) ध्रु भक्त को तारागन में ऐसा स्थिर और ऊँचा स्थान दिया कि सब देवता और तारागन उनकी फेरी देते हैं।

काम हेतु पैरो हतो, गंगा स्यामी रात ।
सो तुलसी तुलसी करो, महिमा कही न जात[1] ॥ ६१ ॥
विष को प्याला घोर कै, राना भेजो छान ।
मीरा अचयो राम कहि, हो गयो सुधा समान[2] ॥ ६२ ॥
श्री सुक मुनि महराज की, महिमा कही न जाय ।
पतित तरन को भागवत, रची जहाज बनाय[3] ॥ ६३ ॥
चरनदास जुगतानन्द स्वामी, दोऊ पुरपन के भूप ।
परम सनेही नाम के, होगये बिमल सरूप[4] ॥ ६४ ॥
और बहुत जुग चार के, कहँ लग कहौं बखान ।
मेहर तुम्हारिहि से प्रभू, पावत पद निर्बान ॥ ६५ ॥
तातेँ तेरे नाम की, महिमा अपरम्पार ।
जैसे किनका अनल को, सघन बनै दे जार ॥ ६६ ॥
जोग जग्य जप तप बरत, तीरथ नेम अचार ।
चार बेद षट सास्त्र प्रभु, तुम किरपा की लार ॥ ६७ ॥

---

(१) कहते हैं कि गोसाईं तुलसीदास जी अपनी स्त्री को अत्यंत चाहते थे। एक बार जब वह अपने मायके गई हुई थीं उसके वियोग में ऐसे बेकल हुए कि बरसात की बाढ़ और अंधेरी रात में एक मुर्दे पर चढ़ कर नदी पार करके उसके घर पहुँचे। वहाँ किवाड़ बंद पाया तो एक साँप को जो छत से लटक रहा था पकड़ कर चढ़ गये। स्त्री को उनसे यह समाचार सुन कर दुःख हुआ और बोली कि जो तुम ऐसी प्रीत राम से लगाते तो मट्टी से कंचन हो जाते। यह वचन तुलसी दासजी के हृदय में ऐसा बिध गया कि अपनी स्त्री के चरनों पर गिरे कि तू मेरी गुरू है और उसी दिन से भगवत भक्ति मे तत्पर हो कर प्रेम सिंधु मे तैरने लगे जिसका प्रमान उन की रामायन है।

(२) मीराबाई उदयपुर के राना की पतोह की अतुल्य भक्ति जगत-विख्यात है। राना इनकी भक्ति और साधु सेवा में रहने से जलता था और एक बार विष प्याले में घोल कर चरनामृत के नाम से इनको भेजा। मीरा जी उसे सिर पर चढ़ा कर पी गईं और भगवत कृपा से जहर का कुछ भी असर न हुआ।

(३) सुकदेव मुनि के पिता व्यास जी ने भागवत बनाई।

(४) जुगतानन्द जी महात्मा चरनदासजी के गुरमुख चेले थे। चरनदासजी का जीवन-चरित्र उनकी बानी में छापा जा चुका है।

कृपा नाम के निकट हीँ, नाम सतगुरन पास ।
दयादास के हृदय मेँ, हरि गुरु करो निवास ॥ ६८ ॥
चन्द्रायन एकादसी, और बरत आचार ।
दयादास देखे सबै, तुम किरपा की लार ॥ ६६ ॥
तीरथ अठ सठ सास्त्र बिधि, जो अन्हाय फल होय ।
दयादास तुम कृपा की, सहज निकट है सोय ॥ १०० ॥
बिनैमाल जो नित पढ़ै, ग्रेही क्या अबधूत ।
तिनकी छाँह न छु सकैँ, सपनेहू जमदूत ॥ १०१ ॥
तीरथ जप तप जे सबै, बहु बिधि दान अनेक ।
बिनैमाल तिरकाल पढ़ि, तिस सम सर नहिँ एक ॥ १०२ ॥
चार बेद छः सास्त्र हैँ, अरु दस आठ पुरान ।
सब ग्रंथन को सोधि कै, कीन्हो बिनय बखान ॥ १०३ ॥
दुख दरिद्र कल मल दहन, जैसे जलै कृसान ।
धन बिद्या सन्तान सुख, लहै परम कल्यान ॥ १०४ ॥
बिनैमाल जो कह सुनै, तन मन धन अनुराग ।
चार पदारथ पावहीँ, दयादास बड़ भाग ॥ १०५ ॥

संतबानी पुस्तकमाला का सूचीपत्र पीछे देखिये

हिन्दी पुस्तक माला का सूचीपत्र

पुस्तक	मूल्य
काव्य-निर्णय	१॥)
रामचरित मानस	२५)
अयोध्या काण्ड	२)
आरण्य काण्ड	१)
सुन्दर काण्ड	१)
उत्तर काण्ड	१)
गुटका रामायण	१॥)
तुलसी ग्रन्थावली	६)
श्रीमद् भागवत	॥।)
चित्र हिन्दी महाभारत	५)
विनय पत्रिका	६)
विनय कोश	४)
फ्रान्स की राज्य क्रान्ति का इतिहास	।=)
कवित्त रामायण	।=)
हनूमान बाहुक	)॥
सुमनोञ्जलि तीनों खंड (सुनहरी जिल्द सहित)	२)
सिद्धि	॥)
प्रेम परिणाम	॥)
सावित्री और गायत्री	॥।)
कर्मफल	॥।)
महाराणी शशिप्रभा देवी	१।)
द्रौपदी	॥।)
नल-दमयन्ती	॥।)
भारत के वीर पुरुष	२)
प्रेम-तपस्या	॥)
करुणादेवी	॥।)
उत्तर ध्रुव की भयानक यात्रा (सचित्र)	॥)
संदेह (सजिल्द)	१।)
नरेन्द्र भूषण	१)
युद्ध की कहानियाँ	।=)
गल्प पुष्पाञ्जलि	॥।)
दुःख का मीठा फल	१)
नव कुसुम (प्रथम भाग)	॥।)
" (द्वितीय ")	॥।)

नाट्य पुस्तक माला—

पुस्तक	मूल्य
पृथ्वीराज चौहान	१)
समाज चित्र	॥।)
भक्त प्रह्लाद	॥)

बाल पुस्तक माला—

पुस्तक		मूल्य
सचित्र बाल शिक्षा	(प्र० भा०)	।)
" "	(द्वि० ")	।=)
" "	(तृ० ")	॥)
दो वीर बालक		॥)
घोंघा गुरू की कथा		।)
बाल विहार (सचित्र)		=)
हिन्दी कवितावली		=)
" साहित्य प्रदीप		॥)
सती सीता		॥)
स्वदेश गान	(प्र० भा०)	-)
"	(द्वि० ")	-)
"	(तृ० ")	-)

संस्कृत पुस्तक माला—

पुस्तक	मूल्य
पुरुष परीक्षा (शुद्ध-संशोधित)	॥)
भोज प्रबन्ध (" ")	॥=)
ब्राह्मण संग्रह	॥।
दश कुमार चरित्र (अष्ट-सर्ग, आलोचनायुक्त)	१
गुप्त वंशीय राजाओं के शिलालेख	१
हितोपदेश, नलोपाख्यान तथा महाभारत संग्रह	

भक्ति पुस्तक माला—

ज्ञान रत्न माला

चित्र माला—(Album

प्रथम भाग
द्वितीय "
तृतीय "
चतुर्थ "
चारों भाग एक साथ लेने से

कथा

उलझी लड़ियाँ (कहानी संग्रह)
प्रवाह (उपन्यास)
चक्षुदान "